गोपनीय गायत्री तंत्र

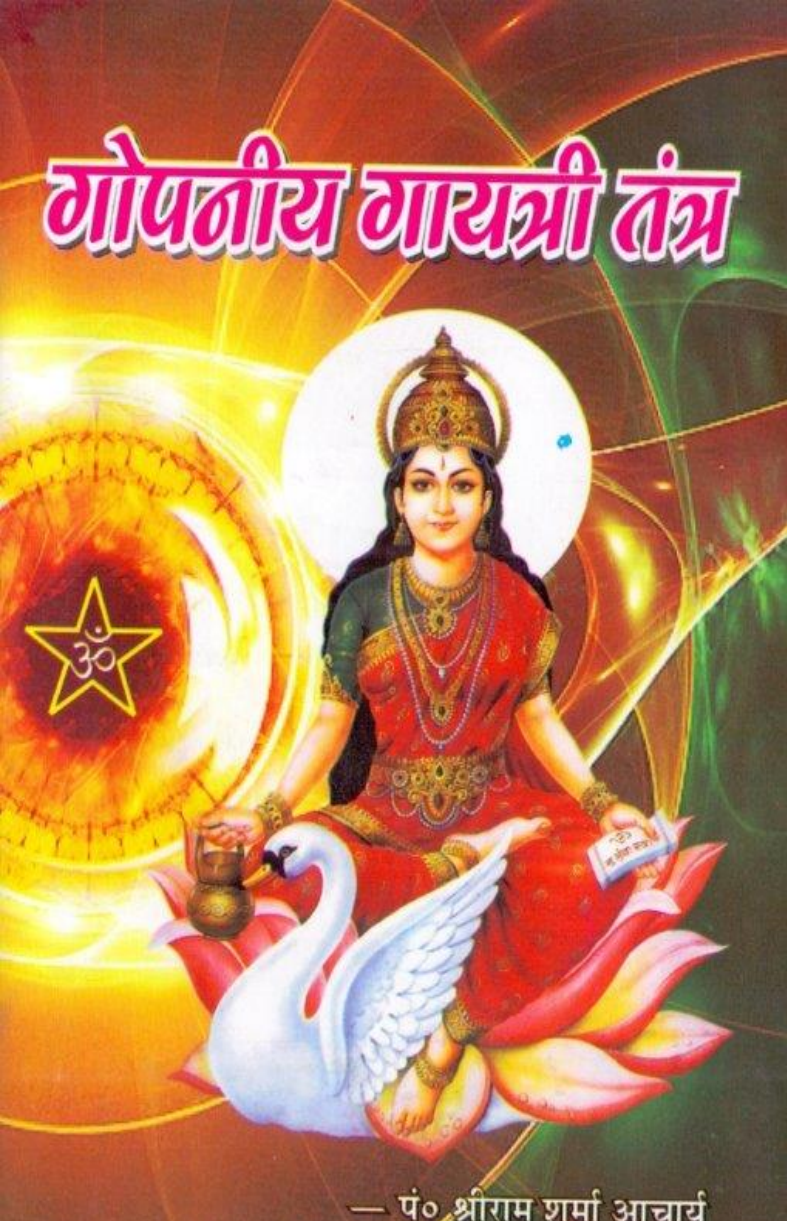

— पं० श्रीराम शर्मा आचार्य

गोपनीय गायत्री तंत्र

लेखक

पं० श्रीराम शर्मा आचार्य

प्रकाशक

युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट

गायत्री तपोभूमि, मथुरा—२८१००३

फोन : (०५६५) २५३०१२८, २५३०३९९

मो० : ०९९२७०८६२८९, ०९९२७०८६२८७

फैक्स : २५३०२००

पुनरावृत्ति सन् २०१३

मूल्य : ६.०० रुपये

प्रकाशक :
युग निर्माण योजना विस्तार ट्रस्ट
गायत्री तपोभूमि
मथुरा (उ० प्र०)

लेखक :
पं० श्रीराम शर्मा आचार्य

पुनरावृत्ति सन् २०१३

मुद्रक :
युग निर्माण योजना प्रेस
गायत्री तपोभूमि, मथुरा

गोपनीय गायत्री तंत्र

योग-साधना के दो मार्ग हैं—एक दक्षिण मार्ग, दूसरा वाम मार्ग। दक्षिण मार्ग का आधार यह है—"विश्वव्यापी ईश्वरीय शक्तियों को आध्यात्मिक चुंबकत्व से खींचकर अपने में धारण किया जाए, सतोगुण को बढ़ाया जाए और अंतर्जगत में अवस्थित पंच कोश, सप्त प्राण, चेतना चतुष्टय, षटचक्र एवं अनेक उपचक्रों, मात्रिकाओं, ग्रंथियों, भ्रमरों, कमलों, उपत्यिकाओं को जाग्रत करके आनंददायिनी अलौकिक शक्तियों का आविर्भाव किया जाए।"

वाम मार्ग का आधार यह है—"दूसरे प्राणियों के शरीरों में निवास करने वाली शक्ति को इधर से उधर हस्तांतरित करके एक जगह विशेष मात्रा में शक्ति संचित कर ली जाए और उस शक्ति का मनमाना उपयोग किया जाए।"

तांत्रिक साधनाओं की कार्यपद्धति इसी आधार पर चलती है। किन्हीं पशुओं का वध करके उनके पाँच प्राणों का उपयोगी भाग खींच लिया जाता है। जैसे शिकारी लोग सुअर के शरीर में निकलने वाली चरबी को अलग से निकाल लेते हैं, वैसे ही तंत्र साधक उस वध होते हुए पशु के सप्तप्राणों में से पाँच प्राणों को चूस जाते हैं और उससे अपनी शक्ति बढ़ा लेते हैं। बकरे, भैंसे, मुरगे आदि के बलिदानों का आधार यही है। मृत मनुष्यों के शरीर में एक सप्ताह तक कुछ उपचक्र एवं ग्रंथियों में चैतन्यता बनी रहती है। श्मशान भूमि में रहकर मुरदों के द्वारा शव साधना करने वाले अघोरी उन मृतकों से भी शक्ति चूसते हैं। देखा जाता है कि कई अघोरी मृत बालकों की लाशों को जमीन में से खोद ले जाते हैं, मृतकों की खोपड़ी लिए फिरते हैं, चिताओं पर भोजन पकाते हैं। यह सब इसी प्रयोजन के लिए किया जाता है। कुछ

तांत्रिक कोमल प्रकृति के वयस्क स्त्री, पुरुषों या छोटे बालकों पर अपना अदृश्य दांत गढ़ाकर उनका प्राण चूस जाते हैं। ऐसे अघोरी, कापालिक, रक्तबीज, वैतालिक, ब्रह्म राक्षस पुरुष तथा डाकिनी, शाकिनी, कपाल कुंडली, सर्पसूत्रा आदि स्त्रियाँ अब भी गुप्त व प्रकट रूप से जहाँ-तहाँ देखी जाती हैं।

इस प्रकार मनुष्य या पशु-पक्षियों के शरीर से चूसी हुई शक्ति अधिक समय तक ठहरती नहीं, उसका तात्कालिक कार्य के लिए ही उपयोग हो सकता है। किसी पर मारण प्रयोग करना होता है, कृत्या, घात, चौकी या मूँठ चलानी होती है तो उसके लिए किन्हीं प्राणियों का बलिदान आवश्यक हो जाता है। तांत्रिकों का आधार ही दूसरे की शक्ति का अपहरण करके अपना काम चलाना है। इसी प्रकार उनके जितने भी काम होते हैं वे इसी प्रकार एक स्थान से शक्ति का अपहरण करके दूसरे पर फेंकने के आधार पर होते हैं।

किसान और डाकू में जो अंतर है, वही अंतर दक्षिणमार्गी योगी और वाममार्गी तांत्रिक में है। किसान अपने खेत में बाहर से लाकर बीज, खाद और पानी डालता है, परिश्रम करके उसकी जुताई, निराई, गुड़ाई, सिंचाई, कटाई करता है, तब फसल का लाभ उठाता है। डाकू इन सब झंझटों में नहीं पड़ता, वह किसी भी रास्ता चलते को लूट लेता है। किसान की अपेक्षा डाकू अधिक नफे में रहता मालूम देता है। वह एक दिन में अमीर बन जाता है और रईसी शान के साथ दौलत खरच करता है। किसान वैसा नहीं कर सकता। कारण यह है कि उसे धन कमाने में काफी समय, श्रम, धैर्य एवं सावधानी से काम लेना पड़ता है। उसे खरच करते समय दरद लगता है, पर डाकू की स्थिति दूसरी है, वह लूटकर लाता है तो होली की तरह उसे फूँक भी सकता है। तांत्रिक चमत्कारी होते हैं। थोड़े ही दिनों के प्रयत्न में वे प्रेत, पिशाच सिद्ध कर

लेते हैं और उनके द्वारा अपना आतंक फैलाते हैं। किसान और डाकू की कोई तुलना नहीं, इसी प्रकार योगी और तांत्रिक की भी समता नहीं हो सकती।

गायत्री द्वारा भी तांत्रिक प्रयोग हो सकते हैं। जो कार्य संसार के अन्य किसी मंत्र से होते हैं, वे गायत्री से भी हो सकते हैं। तंत्र-साधना भी हो सकती है। पर हम अपने अनुयायियों को उस ओर न जाने की सलाह देते हैं, क्योंकि स्वार्थ-साधना का कितना ही बड़ा प्रलोभन उस दिशा में क्यों न हो, पर अनैतिक एवं धर्मविरुद्ध कार्य होने से उसका अंतिम परिणाम अच्छा नहीं होता।

तंत्र का शक्ति-स्रोत दैवी, ईश्वरीय शक्ति नहीं वरन भौतिक शक्ति है। प्रकृति के सूक्ष्म परमाणु अपनी धुरी पर द्रुतगति से भ्रमण करते हैं, तब उनके घर्षण से ऊष्मा पैदा होती है, उसका नाम काली या दुर्गा है। इस ऊष्मा को प्राप्त करने के लिए अस्वाभाविक, उलटा, प्रतिगामी मार्ग ग्रहण करना पड़ता है। जल के बहाव को रोका जाए तो उस प्रतिरोध से एक शक्ति का उद्‌भव होता है। तांत्रिक वाम मार्ग पर चलते हैं, फलस्वरूप काली शक्ति का प्रतिरोध करके अपने को एक तामसिक, पंचभौतिक बल से संपन्न कर लेते हैं। उलटा आहार, उलटा विहार, उलटी दिनचर्या, उलटी गतिविधि; सभी कुछ उनका उलटा होता है।

द्रुतगति से एक नियत दिशा में दौड़ती हुई रेल, मोटर, नदी, वायु आदि के आगे आकर उसकी गति को रोकना और उस प्रतिरोध से शक्ति प्राप्त करना यह खतरनाक खेल है। हर कोई इसे कर भी नहीं सकता, क्योंकि प्रतिरोध के समय झटका लगता है। प्रतिरोध जितना ही कड़ा होगा झटका भी उतना ही जबरदस्त लगेगा। तंत्रसाधक जानते हैं कि जन-कोलाहल से दूर एकांत खंडहरों, श्मशानों में अर्द्ध रात्रि के समय जब उनकी साधना का मध्यकाल आता है, तब कितने रोमांचकारी

भय सामने आ उपस्थित होते हैं। गगनचुंबी राक्षस, विशालकाय सर्प, लाल नेत्रों वाले शूकर और महिष, छुरी से दाँतों वाले सिंह, साधक के आस-पास जिस रोमांचकारी भयंकरता से गर्जन-तर्जन करते हुए कुहराम मचाते और आक्रमण करते हैं। उनसे न तो डरना और न विचलित होना साधारण काम नहीं है। साहस के अभाव में यदि इस प्रतिरोधी प्रतिक्रिया से साधक भयभीत हो जाए, तो उसके प्राणसंकट में पड़ सकते हैं। ऐसे अवसरों पर कई व्यक्ति पागल, बीमार, गूँगे, बहरे, अंधे हो जाते हैं, कइयों को प्राणों तक से हाथ धोना पड़ता है। इस मार्ग में साहसी और निर्भीक प्रकृति के मनुष्य ही सफलता पाते हैं।

तांत्रिक साधन गुप्त रखे जाते हैं। उनका सार्वजनिक रूप से प्रकटीकरण करना निषिद्ध है, क्योंकि अधिकारी अनधिकारी का निर्णय किए बिना वाम मार्ग में हाथ डालना, आग से खेलना है। पग-पग पर आने वाली कठिनाइयों का समाधान अनुभवी पथ-प्रदर्शक ही कर सकता है। बिना गुरु के, अनधिकारी व्यक्ति तंत्र-साधना करें तो परिणाम कैसा होगा? इसकी कल्पना करना कुछ विशेष कठिन नहीं है। एक नौसिखिया एक बार ऐसी ही विपत्ति में फँस गया। प्रतिरोध की प्रतिक्रिया को वह सहन नहीं कर सका, फलस्वरूप उसकी छाती में रक्तवाहिनी तीन नाड़ियाँ फट गईं। मुख, नाक और मल-मार्ग से खून बह रहा था, ज्वर चढ़ा हुआ था और शरीर काँप रहा था, भय से भरी हुई चीत्कारें बार-बार मुख से निकलती थीं। हमने उसका उपचार किया, कई दिन में उसका कष्ट दूर हो पाया और पूर्ण स्वस्थ होने में तो उसे प्रायः सात महीने लग गए।

गायत्री तंत्र के द्वारा प्रकृति के परमाणुओं के घर्षण की ऊष्मा (काली) का आह्वान होता है। प्राणियों के शरीर में रहने वाली विद्युत को अत्यधिक उत्तेजित करके उत्तेजना समय की बढ़ी हुई शक्ति का

भी अपहरण कर लिया जाता है। प्राण बलिदान या आंशिक रक्त, मांस आदि के प्रतिघात करते समय प्राणी की अंतश्चेतना व्याकुलता, पीड़ा एवं उत्तेजना की स्थिति में होती है। उस अवसर से तांत्रिक लोग लाभ उठा लेते हैं।

तंत्र के चमत्कारी प्रलोभन असाधारण हैं। दूसरों पर आक्रमण करना तो उसके द्वारा बहुत ही सरल है। किसी को बीमारी, पागल पन, बुद्धिभ्रम, उच्चाटन उत्पन्न कर देना, प्राणघातक संकट में डाल देना आसान है। सूक्ष्म जगत में भ्रमण करती हुई किसी चेतना ग्रंथि को प्राणवान बनाकर उसे प्रेत, पिशाच, वेताल, भैरव, कर्ण पिशाचिनी, छाया पुरुष आदि के रूप में सेवक की तरह काम लेना, सुदूर देशों से अजनबी चीजें मँगा देना, जेब की चीजें या अज्ञात व्यक्तियों के नाम-पते बता देना, तांत्रिकों के लिए संभव है। आगे चलकर वेश बदल लेना या किसी वस्तु का रूप बदल देना भी उनके लिए संभव है। इसी प्रकार की अनेक विलक्षणताएँ उनमें देखी जाती हैं, जिससे लोग बहुत प्रभावित होते हैं और उनकी भेंट-पूजा भी खूब होती है। परंतु स्मरण रखना चाहिए कि इन शक्तियों का स्रोत परमाणुगत ऊष्मा (काली) ही है जो परिवर्तनशील है। यदि थोड़े दिनों साधना बंद रखी जाए या प्रयोग छोड़ दिया जाए तो उस शक्ति का घट जाना या समाप्त हो जाना अवश्यंभावी है।

तंत्र के द्वारा कुछ छोटे-मोटे लाभ भी हो सकते हैं। किसी के तांत्रिक आक्रमण को निष्फल करके किसी निर्दोष की हानि को बचा देना ही सदुपयोग है। तांत्रिक विधि से 'शक्तिपात' करके अपनी उत्तम शक्तियों का कुछ भाग किसी निर्बल मन वाले को देकर उसे ऊँचा उठा देना भी सदुपयोग ही है। और भी कुछ ऐसे ही प्रयोग हैं जिन्हें विशेष परिस्थिति में काम में लाया जाए, तो वह भी सदुपयोग ही कहा

जाएगा। परंतु असंस्कृत मनुष्य इस तमोगुण प्रधान शक्ति का सदा सदुपयोग ही करेंगे इसका कुछ भरोसा नहीं। स्वार्थ-साधन का अवसर हाथ में आने पर उनका लोभ छोड़ना किन्हीं विरलों का ही काम होता है।

तंत्र अपने आप में कोई बुरी चीज नहीं है। वह एक विशुद्ध विज्ञान है। वैज्ञानिक लोग यंत्रों और रासायनिक पदार्थों की सहायता से प्रकृति की सूक्ष्म शक्तियों का उपयोग करते हैं। तांत्रिक अपने अंतर्जगत को ही ऐसी रासायनिक एवं यांत्रिक स्थिति में ढाल लेता है कि अपने शरीर और मन को एक विशेष प्रकार से संचालित करके प्रकृति की सूक्ष्म शक्तियों का मनमाना उपयोग करे। इस विज्ञान का विद्यार्थी कोमल परमाणुओं वाला होना चाहिए, साथ ही साहसी प्रकृति का भी। कठोर बनावट और कमजोर मन वाले इस दिशा में अधिक प्रगति नहीं कर पाते। यही कारण है कि पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियाँ अधिक आसानी से सफल तांत्रिक बनते देखी गई हैं। छोटी-छोटी प्रारंभिक सिद्धियाँ तो उन्हें स्वल्प प्रयत्न से ही प्राप्त हो जाती हैं।

तंत्र एक स्वतंत्र विज्ञान है। विज्ञान का दुरुपयोग भी हो सकता है और सदुपयोग भी। परंतु इसका आधार गलत और खतरनाक है। शक्ति प्राप्त करने के उद्गम स्रोत अनैतिक, अवांछनीय हैं; साथ ही प्राप्त सिद्धियाँ भी अस्थायी हैं। आमतौर से तांत्रिक घाटे में रहता है, उससे संसार का जितना उपकार हो सकता है, उससे अधिक अपकार होता है। इसलिए चमत्कारी होते हुए भी इस मार्ग को निषिद्ध एवं गोपनीय ठहराया गया है। अन्य समस्त तंत्र-साधनों की अपेक्षा गायत्री का वाम मार्ग अधिक शक्तिशाली है। अन्य सभी विधियों की अपेक्षा इस विधि से मार्ग सुगम पड़ता है, फिर भी निषिद्ध वस्तु त्याज्य है। सर्वसाधारण के लिए तो उससे दूर रहना ही उचित है।

यों तंत्र की कुछ सरल विधियाँ भी हैं, अनुभवी पथ प्रदर्शक इन कठिनाइयों का मार्ग सरल बना सकते हैं। हिंसा, अनीति एवं अकर्म से बचकर ऐसे लाभों के लिए साधन करा सकते हैं, जो व्यावहारिक जीवन में उपयोगी हों और अनर्थ से बचकर स्वार्थ साधन होता रहे। पर यह लाभ तो दक्षिण मार्गी साधना से भी हो सकते हैं। जल्दबाजी का प्रलोभन छोड़कर यदि धैर्य और सात्विक साधन किए जाएँ, तो उनके लाभ भी कम नहीं हैं। हमने दोनों मार्गों का लंबे समय तक साधन करके यही पाया है कि दक्षिण मार्ग का राजपथ ही सर्वसुलभ है।

गायत्री के द्वारा साधित तंत्रविद्या का क्षेत्र बड़ा विस्तृत है। सर्पविद्या, प्रेतविद्या, भविष्य-ज्ञान, अदृश्य वस्तुओं का देखना, परकाया प्रवेश, घात-प्रतिघात, दृष्टिबंध, मारण, उन्मादीकरण, वशीकरण, विचार संदोहन, मोहन तंत्र, रूपांतरण, विस्तारण, संतान सुयोग, छाया पुरुष, भैरवी, अपहरण, आकर्षण, अभिकर्षण आदि अनेकों ऐसे-ऐसे कार्य हो सकते हैं, जिनको अन्य किसी भी तांत्रिक प्रक्रिया के द्वारा किया जा सकता है। परंतु यह स्पष्ट है कि तंत्र की प्रणाली सर्वोपयोगी नहीं है। उसके अधिकारी कोई विरले ही होते हैं।

दक्षिणमार्गी वेदोक्त, योगसम्मत गायत्री साधना, किसान के द्वारा अन्न उपजाने के समान धर्मसंगत, स्थिर लाभ देने वाली और लोक-परलोक में सुख-शांति देने वाली है। पाठकों का वास्तविक हित इसी राजपथ के अवलंबन में है।

गायत्री का गोपनीय वाम मार्ग

न देयं परशिष्येभ्यो ह्यभक्तेभ्यो विशेषतः।
शिष्येभ्यो भक्ति युक्तेभ्यो ह्यन्यथा मृत्युमाप्नुयात्॥

दूसरे के शिष्य के लिए विशेषकर भक्ति रहित के लिए यह मंत्र कभी न देना चाहिए। इसकी दीक्षा भक्तियुक्त शिष्य को ही देनी चाहिए, अन्यथा मृत्यु की प्राप्ति होती है।

उपरोक्त प्रमाण में यह बताया गया है कि तंत्र एक गुप्त विज्ञान है। उसकी सब बातें सब लोगों के सामने प्रकट करने योग्य नहीं होतीं। कारण यह है कि तांत्रिक साधनाएँ बड़ी क्लिष्ट होती हैं। वे उतनी ही कठिन हैं, जितना कि समुद्र की तली में घुसकर मोती निकालना। गोताखोर लोग जान को जोखिम में डालकर पानी में बड़ी गहराई तक नीचे उतरते हैं, तब बहुत प्रयत्न के बाद उन्हें कुछ मोती हाथ लगते हैं। परंतु इस क्रिया में अनेक बार उन्हें जल-जंतुओं का सामना करना पड़ता है। नट अपनी कला दिखाकर लोगों को मुग्ध कर देता है और प्रशंसा भी प्राप्त करता है, परंतु यदि एक बार चूक जाए तो खैर नहीं।

तंत्र प्रकृति से संग्राम करके उसकी रहस्यमय शक्तियों का विजय-लाभ करना है। इसके लिए असाधारण प्रयत्न करने पड़ते हैं और उनकी असाधारण ही प्रतिक्रिया होती है। पानी में जोर से ढेला फेंकने पर वहाँ का पानी जोर से उछाल खाता है और एक छोटे विस्फोट जैसी स्थिति दृष्टिगोचर होती है। तांत्रिक साधक भी एक रहस्यमय साधना के द्वारा प्रकृति के अंतराल में छिपी हुई शक्ति को प्राप्त करने के लिए अपनी साधना का एक आक्रमण करता है। उसकी एक प्रतिक्रिया होती है, उस प्रतिक्रिया से कभी-कभी साधक के भी आहत हो जाने का भय रहता है।

जब बंदूक चलाई जाती है, तो जिस समय नली में से गोली बाहर निकलती है, उस समय वह पीछे की ओर एक झटका मारती है और भयंकर शब्द करती है। यदि बंदूक चलाने वाला कमजोर प्रकृति का हो, तो उस झटके से पीछे की ओर गिर सकता है, धड़ाके की आवाज से डर या घबरा सकता है। चंदन के वृक्षों के निकट सर्पों का

निवास रहता है, गुलाब के फूलों में काँटे होते हैं, शहद प्राप्त करने के लिए मक्खियों के डंक का सामना करना पड़ता है, सर्पमणि प्राप्त करने के लिए भयंकर सर्प से और गजमुक्ता प्राप्त करने के लिए मदोन्मत्त हाथी से जूझना पड़ता है। तांत्रिक साधनाएँ ऐसे ही विकट पुरुषार्थ हैं, जिनके पीछे खतरों की शृंखला जुड़ी रहती है। यदि ऐसा न होता, तो उन लाभों को हर कोई आसानी से प्राप्त कर लिया करता।

तंत्र एक उत्तेजनात्मक उग्र प्रणाली है। इस प्रक्रिया के अनुसार जो साधना की जाती है, उससे प्रकृति के अंतराल में बड़े प्रबल कंपन उत्पन्न होते हैं, जिनके कारण ताप और विक्षोभ की मात्रा बढ़ती है। गरमी के दिनों में सूर्य की प्रचंड किरणों के कारण जब वायुमंडल का तापमान बढ़ जाता है, तो हवा बहुत तेज चलने लगती है। लू, आँधी और तूफान के दौरे बढ़ते हैं। उस उग्र उत्तेजना में खतरे बढ जाते हैं, किसी को लू सता जाती है, किसी की आँख में धूल भर जाती है, अनेकों के शरीर फोड़े-फुंसियों से भर जाते हैं, आँधी से छप्पर उड़ जाते हैं, पेड़ उखड़ जाते हैं। कई बार हवा के भँवर पड़ जाते हैं, जो एक छोटे दायरे में बड़ी तेजी से नाँचते हुए डरावनी शक्ल में दिखाई पड़ते हैं। तंत्र की साधनाओं से ग्रीष्मकाल का-सा उत्पात पैदा होता है और मनुष्य के बाह्य एवं आंतरिक वातावरण में एक प्रकार की सूक्ष्म लू एवं आँधी चलने लगती है, जिसकी प्रचंडता के झकझोरे लगते हैं। यह झकझोरे मस्तिष्क के कल्पना-तंतुओं से जब संघर्ष करते हैं, तो अनेकों प्रकार की भयंकर प्रतिमूर्तियाँ दृष्टिगोचर होने लगती हैं। ऐसे अवसर पर डरावने भूत-प्रेत, पिशाच, देव-दानव जैसी आकृतियाँ दीख सकती हैं। दृष्टि-दोष उत्पन्न होने से कुछ न कुछ दिखाई दे सकता है। अनेकों प्रकार के शब्द, रूप, रस, गंध और स्पर्शों का अनुभव हो

सकता है। यदि साधक निर्भयतापूर्वक इन स्वाभाविक प्रतिक्रियाओं को देखकर मुस्कराता न रहे, तो उसका साहस नष्ट हो जाता है और उन भयंकरताओं से यदि वह भयभीत हो जाए, तो वह भय उसके लिए संकट बन सकता है।

इस प्रकार की कठिनाई का हर कोई मुकाबला नहीं कर सकता, इसके लिए एक विशेष प्रकार की साहसपूर्ण मनोभूमि होनी चाहिए। मनुष्य दूसरों के विषय में तो परीक्षा बुद्धि रखता है, पर अपनी स्थिति का ठीक परीक्षण कोई विरले ही कर सकते हैं। 'मैं तंत्र साधनाएँ कर सकता हूँ या नहीं' इसका निर्णय अपने लिए कोई मनुष्य स्वयं नहीं कर सकता। इसके लिए उसे किसी दूसरे अनुभवी व्यक्ति की सहायता लेनी पड़ती है। जैसे रोगी अपनी चिकित्सा स्वयं नहीं कर सकता, विद्यार्थी अपने आप शिक्षा प्राप्त नहीं कर सकता, वैसे ही तांत्रिक साधनाएँ भी अपने आप नहीं की जा सकतीं। इसके लिए किसी विज्ञपुरुष को गुरु नियुक्त करना होता है। वह गुरु सबसे पहले अपने शिष्य की मनोभूमि का निरीक्षण करता है और तब उस परीक्षण के आधार पर यह निश्चित करता है कि इस व्यक्ति के लिए कौन सी साधना उपयोगी होगी और उसकी विधि में अन्यों की अपेक्षा क्या हेर-फेर करना ठीक होगा। साधना काल में जो विक्षेप आते हैं, उनका तात्कालिक उपचार और भविष्य के लिए सुरक्षा व्यवस्था बनाना भी गुरु के द्वारा ही संभव है। इसलिए तंत्र की साधनाएँ गुरु परंपरा से चलती हैं। सिद्धि के लोभ से अनधिकारी साधक स्वयं अपने आप उन्हें ऊट-पटांग ढंग से न करने लग जाएँ, इसलिए उन्हें गुप्त रखा जाता है। रोगी के निकट मिठाइयाँ नहीं रखी जातीं, क्योंकि पचाने की शक्ति न होते हुए भी यदि लोभवश उसने उन्हें खाना शुरू कर दिया, तो अंततः उसका अहित ही होगा।

तंत्र की साधनाएँ सिद्ध करने के बाद जो शक्ति आती है उसका यदि दुरुपयोग करने लगे तो उससे संसार में बड़ी अव्यवस्था फैल सकती है, दूसरों का अहित हो सकता है, अनधिकारी लोगों को अनावश्यक रीति से लाभ या हानि पहुँचाने से उनका अनिष्ट ही होता है। बिना परिश्रम के जो लाभ प्राप्त होता है, वह अनेक प्रकार के दुर्गुण पैदा करता है। जिसने जुआ खेलकर दस हजार रुपया कमाया है, वह उन रुपयों का सदुपयोग नहीं कर सकता और न उनके द्वारा वास्तविक सुख प्राप्त कर सकता है। इसी प्रकार ईश्वरीय या राजकीय विधि से मिलने वाले स्वाभाविक दंड विधान को छोड़कर किसी को मंत्रबल से हानि पहुँचाई जा सकती है। इसलिए हर किसी को उनकी साधना करने का अधिकार नहीं दिया गया है। यह तो एक विशेष मनोभूमि के व्यक्तियों के लिए सीमित क्षेत्र में उपयोग होने वाली वस्तु है। इसलिए उसका सार्वजनिक प्रकाशन नहीं किया जाता। हमारे घर सिर्फ उन्हीं व्यक्तियों के प्रयोग के लिए होते हैं, जो उसमें अधिकारपूर्वक रहते हैं। निजी घरों का उपयोग धर्मशाला की तरह नहीं हो सकता और न हर कोई मनुष्य किसी के घर में प्रवेश कर सकता है। तंत्र भी अधिकार संपन्न मनोभूमि वाले विशेष व्यक्तियों का घर है, उसमें हर व्यक्ति का प्रवेश नहीं है। इसलिए उसे नियत सीमा तक सीमित रखने के लिए गुप्त रखा गया है।

हम देखते हैं कि तंत्र ग्रंथों में जो साधन-विधियाँ लिखी गई हैं, वे अधूरी हैं। उनमें दो ही बातें मिलती हैं—एक साधन का फल, दूसरे साधन-विधि का कोई छोटा-सा अंग। जैसे एक स्थान पर आया है कि 'छोंकर की लकड़ी से हवन करने से पुत्र की उत्पत्ति होती है।' केवल इतने उल्लेख मात्र को पूर्ण समझकर जो छोंकर की लकड़ियों के गट्ठे भट्ठी में झोंकेगा, उसकी मनोकामना कभी पूर्ण नहीं होगी। मूर्ख लोग समझेंगे कि साधना-विधि झूठी है। परंतु इस

शैली से वर्णन करने में तंत्रकारों का मंतव्य यह है कि साधना-विधि का संकेत कायम रहे, जिससे इस विद्या का लोप न हो, वह विस्मृत न हो जाए। यह सूत्रप्रणाली है। व्याकरण आदि के सूत्र बहुत छोटे-छोटे होते हैं। उनमें अक्षर तो दस-दस या पाँच-पाँच ही होते हैं पर अर्थ बहुत लघु संकेत मात्र होते हैं, जिससे याद कम करना पड़े और समय पड़ने पर पूरी बात याद हो आवे।

'छोंकर के हवन से पुत्रप्राप्ति' इस संकेत-सूत्र में एक भारी विधान छिपा हुआ है। किस मनोभूमि का मनुष्य, किस समय, किन नियमों के साथ, किन उपकरणों के द्वारा, किन मंत्रों से, कितना हवन करे, तब पुत्र की प्राप्ति हो। यह सब विधान उस सूत्र में छिपाकर रखा गया है। छिपाया इसलिए है कि अनधिकारी लोग उसका प्रयोग न कर सकें। संकेत रूप से कहा इसलिए गया है कि कालांतर में इस तथ्य का विस्मरण न हो जाए, आधार मालूम रहने से आगे की बात का स्मरण हो आना सुगम होता है। तंत्र ग्रंथों में साधना-विधियों को गुप्त रखने पर बार-बार जोर दिया गया है। साथ ही कहीं-कहीं ऐसी विधियाँ बताई गई हैं, जो देखने में बड़ी सुगम मालूम पड़ती हैं, पर उनका फल बड़ा भारी कहा गया है। इस दिशा में अनजान लोगों के लिए यह गोरख धंधा बड़ा उलझन भरा हुआ है। वे कभी उसे अत्यंत सरल समझते हैं और कभी उसे असत्य मानते हैं, पर वस्तुस्थिति दूसरी ही है। संकेत-सूत्रों की विधि से उन साधनाओं का वर्णन करके तंत्रकारों ने अपनी रहस्यवादी मनोवृत्ति का परिचय दिया है।

गायत्री के दोनों ही प्रयोग हैं। वह योग भी है और तंत्र भी। उससे आत्मदर्शन और ब्रह्मप्राप्ति भी होती है तथा सांसारिक उपार्जन और संहार भी। गायत्री योग दक्षिण मार्ग है, उस मार्ग से हमारे आत्मकल्याण का उद्देश्य पूरा होता है। गायत्री तंत्र वाम मार्ग है, उससे सांसारिक वस्तुएँ

प्राप्त की जा सकती हैं और किसी का नाश भी किया जा सकता है। तंत्र का विषय गोपनीय है, इसलिए गायत्री तंत्र के ग्रंथों में ऐसी अनेक साधनाएँ प्राप्त होती हैं, जिनमें धन, संतान, स्त्री, यश, आरोग्य, पद प्राप्ति, रोग-निवारण, शत्रु नाश, पाप नाश, वशीकरण आदि लाभों का वर्णन है और संकेत रूप से उन साधनाओं का एक अंश बताया गया है। परंतु यह भली प्रकार स्मरण रखना चाहिए कि इन संक्षिप्त संकेतों के पीछे एक भारी कर्मकांड एवं विधि-विधान है। वह पुस्तकों में नहीं, वरन अनुभवी, साधना संपन्न व्यक्तियों से प्राप्त होता है।

तंत्र ग्रंथों से संग्रह करके कुछ संकेत आगे के पृष्ठों पर दिए जाते हैं, जिससे पाठकों को गायत्री के द्वारा मिल सकने वाले महान लाभों का थोड़ा-सा परिचय प्राप्त हो जाए।

अथ गायत्री तन्त्रम्

नारद उवाच—

नारायण महाभाग गायत्र्यास्तु समासतः।
शान्त्यादिकान्प्रयोगांस्तु वदस्व करुणानिधे॥

नारद जी ने प्रश्न किया—हे नारायण! गायत्री के शांति आदि के प्रयोगों को कहिए।

नारायण उवाच—

अति गुह्यमिदं पृष्टं त्वया ब्रह्मतनूद्भव।
वक्तव्यं न कस्मैचिद् दुष्टाय पिशुनाय च॥

यह सुनकर श्री नारायण ने कहा कि हे नारद! आपने अत्यंत गुप्त बात पूछी है, परंतु यह किसी दुष्ट या पिशुन (छलिया) से नहीं कहनी चाहिए।

अथ शान्तिर्यथोक्ताभिः समिद्भिर्जुहुयाद् द्विजः।
शमी समिद्भिः शाम्यन्ति भूतरोग ग्रहादयः॥

द्विजों को शांति प्राप्त करने के लिए हवन करना आवश्यक है तथा शमी की समिधाओं से हवन करने पर भूत रोग एवं ग्रहादि की शांति होती है।

आर्द्राभिः क्षीरवृक्षस्य समिद्भिः जुहुयाद् द्विजः।
जुहुयाच्छकलैर्वापि भूतरोगादि शान्तये॥

दूध वाले वृक्षों की आर्द्र समिधाओं से हवन करने पर ग्रहादि की शांति होती है। अतः भूत रोगादि की शांति के लिए संपूर्ण प्रकार की समिधाओं से हवन करना आवश्यक है।

जलेन तर्पयेत्सूर्यं पाणिभ्यां शान्तिमाप्नुयात्।
जानुघ्ने जले जप्त्वा सर्वान् दोषान् शमं नयेत्॥

सूर्य को हाथों के द्वारा जल से तर्पण करने पर शांति मिलती है तथा घुटनों पर्यंत पानी में स्थिर होकर जपने से सब दोषों की शांति होती है।

कण्ठदघ्ने जले जप्त्वा मुच्येत् प्राणान्तका भयात्।
सर्वेभ्यः शान्तिकर्मभ्यो निमज्याप्सु जपः स्मृतः॥

कंठपर्यंत जल में खड़ा होकर जप करने से प्राणों के नाश होने का भय नहीं रहता, इसलिए सब प्रकार की शांति प्राप्त करने के लिए जल में प्रविष्ट होकर ही जप करना श्रेष्ठ है।

सौवर्णे राजते वापि पात्र ताम्रमयेऽपि वा।
क्षीरवृक्षमये वापि निश्छिद्रे मृन्मयेऽपि वा॥
सहस्रं पंचगव्येन हुत्वा सुज्वलितेऽनले।
क्षीरवृक्षमयैः काष्ठैः शेषं सम्पादयेच्छनैः॥

सुवर्ण,चाँदी, ताँबा, दूध वाले वृक्ष की लकड़ी से बने या छेद रहित मिट्टी के बरतन में पंचगव्य रखकर दुग्ध वाले वृक्ष की लकड़ियों से प्रज्वलित अग्नि में हवन करना चाहिए।

प्रत्याहुतिं स्पृशञ्जप्त्वा तद्गव्यं पात्रसंस्थितम्।
तेन तं प्रोक्षयेद्देशं कुशैर्मन्त्रमनुस्मरन्॥

प्रत्येक आहुति में पंचगव्य का स्पर्श करना चाहिए तथा मंत्रोच्चारण करते हुए कुशाओं के द्वारा पंचगव्य ही से संपूर्ण स्थान का मार्जन करना चाहिए।

बलिं प्रदाय प्रयतो ध्यायेत परदेवताम्।
अभिचारसमुत्पन्ना कृत्या पापं च नश्यति॥

पश्चात बलि प्रदान कर देवता का ध्यान करना चाहिए। इस प्रकार ध्यान करने से अभिचारोत्पन्न कृत्या की शांति होती है।

देवभूतपिशाचादीन् यद्येवं कुरुते वशे।
गृहं ग्रामं पुरं राष्ट्रं सर्वं तेभ्यो विमुच्यते॥

देवता, भूत और पिशाच आदि को वश में करने के लिए भी उपरोक्त कही हुई विधि करनी चाहिए। इस प्रकार की क्रिया से देवता, भूत तथा पिशाच सभी अपना-अपना घर, ग्राम, नगर और राज्य छोड़कर वश में हो जाते हैं।

चतुष्कोणे हि गन्धेन मध्यतो रचितेन च।
निखनेन्मुच्यते तेभ्यो निखनेन्मध्यतोऽपि च॥
मण्डले शूलमालिख्य पूर्वोक्ते च क्रमेऽपि वा॥
अभिमन्त्र्य सहस्त्रं तन्निखनेत्सर्व शान्तये॥

चतुष्कोण मंडल में गंध से शूल लिखकर और पूर्वोक्त विधि के द्वारा सहस्त्र गायत्री का जप कर गाड़ देने पर सब प्रकार की सिद्धि मिलती है।

सौवर्णं, राजतं वापि कुम्भं ताम्रमयं च वा।
मृन्मयं वा नवं दिव्यं सूत्रवेष्टितमव्रणम्॥
मण्डिले सैकते स्थाप्य पूरयेन्मन्त्रितैर्जलैः।
दिग्भ्य आहृत्य तीर्थानि चतसृभ्यो द्विजोत्तमैः॥

सोना, चाँदी, ताँबा, मिट्टी आदि में से किसी एक का छेद रहित घड़ा लेकर सूत्र से ढककर बालुयुक्त स्थान में स्थापित कर श्रेष्ठ ब्राह्मणों के द्वारा चारों दिशाओं से लाए हुए जल से भरें।

एला, चन्दन, कर्पूर, जाती, पाटल, मल्लिकाः॥
विल्वपत्रं तथाक्रान्तां, देवीं ब्रीहि यवांस्तिलान्।
सर्षपान् क्षीरवृक्षाणां प्रवालानि च निक्षिपेत्॥

इलायची, चंदन, कपूर, जाती, पाटल, वेला, बिल्वपत्र, विष्णुक्रांता, देवी (सहदेई), जौ, तिल, सरसों और दुग्ध निकलने वाले वृक्षों के पत्ते लेकर उसमें छोड़ें।

सर्वमेवं विनिक्षिप्य कुशकूर्चसमन्वितम्।
स्नातः समाहितो विप्रः सहस्रं मन्त्रयेद् बुधः॥

इस प्रकार सबको छोड़कर कुशा की कूँची बनाकर तथा उसे भी घड़े में छोड़कर स्नान करके एक हजार बार मंत्र का जप करना चाहिए।

दिक्षु सौरानधीयीरन् मंत्रान् विप्रास्त्रयीविदः।
प्रोक्षयेत्पाययेदेनं नीरं तेनाभिसिंचयेत्॥

धर्मादि के ज्ञाता ब्राह्मण के द्वारा मंत्रों से पूतीकृत इस जल से भूत आदि की बाधा से पीड़ित पुरुष के ऊपर मार्जन करे तथा पिलावे और गायत्री मंत्र के साथ इसी जल से अभिसिंचन करे।

भूत रोगाभिचारेभ्यः स निर्मुक्तः सुखी भवेत्।
अभिषेकेण मुच्येत मृत्योरास्यगतो नरः॥

इस प्रकार अभिसिंचन करने पर मरणासन्न हुआ मनुष्य भी भूत-व्याधि से मुक्त होकर सुखी हो जाता है।

गुडूच्याः पर्व विच्छिन्नैः जुहुयाद्दुग्ध-सिक्तकैः।
द्विजो मृत्युंजयो होमः सर्व व्याधिविनाशनः॥

जो द्विज गुर्च (गिलोय) की समिधाओं को दूध में डुबा-डुबाकर हवन करता है, वह संपूर्ण व्याधिओं से विनिर्मुक्त होता है।

आम्रस्य जुहुयात्पत्रैः पयसाज्वरशान्तये।

ज्वर की शांति के हेतु दूध में डाल-डालकर आम्र-पत्तों से हवन करना चाहिए।

वचाभिः पयः सिक्ताभिः क्षयं हुत्वा विनाशयेत्।
मधुत्रितय होमेन राजयक्ष्मा विनश्यति॥

दुग्ध में बच को अभिसिक्त कर हवन करने से क्षय रोग विनष्ट होता है तथा दुग्ध, दधि एवं घृत इन तीनों का अग्नि में हवन करने से राजयक्ष्मा का विनाश होता है।

निवेद्य भास्करायान्नं पायसं होमं पूर्वकम्।
राजयक्ष्माभिभूतं च प्राशयेच्छान्तिमाप्नुयात्॥

दूध की खीर बनाकर सूर्य को अर्पण करे तथा इस हवन से शेष बची हुई खीर को राजयक्ष्मा के रोगी को सेवन करावे, तो रोग की शांति होती है।

कुसुमैः शङ्खवृक्षस्य हुत्वा कुष्ठं विनाशयेत्।
अपस्मार विनाशः स्यादपामार्गस्य तण्डुलैः॥

शंख वृक्ष (कोडिला) के पुष्पों से यदि होम किया जाए तो कुष्ठ रोग विनाश होता है तथा अपामार्ग के बीजों से हवन करने पर अपस्मार रोग का विनाश होता है।

क्षीर वृक्षसमिद्धोमादुन्मादोऽपि विनश्यति।
औदुम्बर-समिद्धोमादतिमेहः क्षयं व्रजेत्॥

क्षीर वृक्ष की समिधाओं से हवन करने पर उन्माद रोग नहीं रहता तथा औदुंबर (गूलर) की समिधाओं से हवन किया जाए तो महा प्रमेह विनष्ट होता है।

मनसैव जपेदेनां बद्धो मुच्येत बन्धनात्॥

बंधन में ग्रसित मनुष्य गायत्री मंत्र का मन में ही जाप करने पर बंधन-मुक्त हो जाता है।

भूत रोग विषादिभ्यः व्यथितं जप्त्वा विमोचयेत्।
भूतादिभ्यो विमुच्येत जलं पीत्वाभिमन्त्रितम्॥

भूत रोग तथा विष आदि से व्यथित पुरुष को गायत्री मंत्र जपना चाहिए। कुश के जल को स्पर्श करता हुआ गायत्री मंत्र का जप करे। फिर इस जल को भूत, प्रेत तथा पिशाच आदि की पीड़ा से पीड़ित मनुष्य को पिला दिया जाए तो वह रोग मुक्त हो जाता है।

अभिमन्त्र्य शतं भस्मन्यसेद्भूतादिशान्तये।
शिरसा धारयेद् भस्म मंत्रयित्वा तदित्यृचा॥

गायत्री मंत्र से अभिमंत्रित भस्म लगाने से भूत-प्रेत को शांति होती है। मंत्र का उच्चारण करते हुए अभिमंत्रित भस्म को पीड़ित पुरुष के मस्तक और शिर में लगाना चाहिए।

अथ पुष्टिं श्रियं लक्ष्मी पुष्पैर्हुत्वाप्नुयाद् द्विजः।
श्री कामो जुहुयात् पद्मैः रक्तैः श्रियमवाप्नुयात्॥

लक्ष्मी की आकांक्षा वाले पुरुष को गायत्री मंत्रोच्चारण के साथ पुष्पों से हवन करना चाहिए। श्री और सौंदर्य की कामना वाले पुरुष को रक्त कमल के फूलों से हवन करने पर श्री की प्राप्ति होती है।

शतं शतं च सप्ताहं हुत्वा श्रियमवाप्नुयात्।
लाजैस्तु मधुरोपेतैर्होमे कन्यामवाप्नुयात्॥

मधुत्रय मिलाकर लाजा से सात दिन तक सौ-सौ आहुतियाँ देकर हवन करने पर सुंदर कन्या की प्राप्ति होती है।

अनेन विधिना कन्या वरमाप्नोति वाच्छितम्।

इस विधि से होम करने पर कन्या अति सुंदर और अभीष्ट वर की प्राप्ति करती है।

निवेद्य भास्करायान्नं पायसं होमपूर्वकम्।
भोजयेत्तदृतुस्नातां पुत्ररत्नमवाप्नुयात्॥

सूर्य को होमपूर्वक पायस अर्पण करके ऋतुस्नान की हुई स्त्री को भोजन कराने से पुत्र की प्राप्ति होती है।

स प्ररोहाभिरार्द्राभिर्हुत्वा आयुष्यमाप्नुयात्।
समिद्भिः क्षीरवृक्षस्य हुत्वाऽऽयुष्यमवाप्नुयात्॥

पलास की समिधा से होम करने पर आयु की वृद्धि होती है। क्षीर वृक्ष की समिधा से हवन किया जाए तो भी आयुवृद्धि होती है।

हुत्वा पद्मशतं मासं राज्यमाप्नोत्यकण्टकम्।
यवागूं ग्राममाप्नोति हुत्वा शालिसमन्वितम्॥

—दे. भा. ११/२४/५५

एक मासपर्यंत यदि कमल से हवन किया जाए तो राज्य की प्राप्ति होती है। शालि से युक्त यवांगु (हलुआ) से हवन किया जाए तो ग्राम की प्राप्ति होती है।

अश्वथ समिधो हुत्वा युद्धादौ जयमाप्नुयात्।
अर्कस्य समिधो हुत्वा सर्वत्र विजयौ भवेत्॥

—दे. भा. ११/२४/५६

पीपल की समिधाओं से हवन करने पर युद्ध में विजयप्राप्ति होती है। आक की समिधाओं से हवन करने पर सर्वत्र ही विजय होती है।

संयुक्तैः पयसा पत्रैः पुष्पैर्वा वेतसस्य च।
पायसेन शतं हुत्वा सप्ताहं वृष्टिमाप्नुयात्॥

—दे. भा. ११/२४/५७

वेत-वृक्ष के फूलों से अथवा पत्र मिलाकर खीर से हवन करने पर वृष्टि होती है।

नाभिदघ्ने जले जप्त्वा सप्ताहं वृष्टिमाप्नुयात्।
जले भस्म शतं हुत्वा महावृष्टि निवारयेत्॥

नाभिपर्यंत जल में खड़े होकर एक सप्ताह तक गायत्री जपने से वृष्टि होती है और जल में सौ बार हवन करने से अति वृष्टि का निवारण होता है।

पयोहुत्वाप्नुयान्मेधामाज्यं बुद्धिमवाप्नुयात्।
पीत्वाभिमंत्र्य सुरसं ब्राह्मया मेधामवाप्नुयात्॥

दूध का हवन करने से तथा घृत की आहुतियाँ देने से बुद्धि-वृद्धि होती है। मंत्रोच्चारण करते हुए ब्राह्मी के रस का पान करने से चिर-ग्राहिणी बुद्धि होती है।

सुचारुविधिनामासं सहस्त्रं प्रत्यहं जपेत्।
आयुष्कामः शुचौ देशे प्राप्नुयादायुरुत्तमम्॥

उचित रीति से प्रतिदिन एक सहस्र जप एक मास तक करने से आयु की वृद्धि होती है तथा बल बढ़ता है। यह दीर्घायु और बल उत्तम देश में प्राप्त होता है।

मास शतत्रयं विप्रः सर्वान्कामानवाप्नुयात्।
एवं शतोत्तरं जप्त्वा सहस्त्रं सर्वमाप्नुयात्॥

इसी प्रकार एक मास तक ३०० मंत्र प्रतिदिन जाप करने पर सब कार्यों में सिद्धि प्राप्त करता है। इसी प्रकार ग्यारह सौ नित्य जपने से सब कार्य ही संपन्न हो जाते हैं।

एकपादो जपेदूर्ध्व बाहू ध्वानिलं वशी।
मासं शतमवाप्नोति यदिच्छेदिति कौशिकः॥

आकाश की ओर भुजाएँ उठाए हुए एक पैर के ऊपर खड़ा होकर साँस को यथाशक्ति अवरोध कर एक मास तक १०० मंत्र प्रतिदिन जपने से अभीष्ट वस्तु की प्राप्ति होती है।

नक्तमश्नन्हविष्यान्नं वत्सरादृषिताभियात्।
गीरमोघा भवेदेन जप्त्वासम्वत्सर द्वयम्॥

इसी प्रकार एक पैर पर खड़ा होकर रात्रि में हविष्यान्न खाकर एक सप्ताह तक जप करने से मनुष्य ऋषि हो जाता है। इसी प्रकार दो वर्ष तक जप करने से वाणी अमोघ होती है।

त्रिवत्सरं जपेदेवं भवेत्त्रैकालदर्शनम्।
आयाति भगवान्देवश्चतुः सम्वत्सरं जपेत्॥

तीन वर्ष तक इसी विधि के अनुसार जप करने से मनुष्य त्रिकालदर्शी हो जाता है और यदि चार वर्ष तक इसका जाप उक्त विधि से किया गया, तो भगवान ही निकट आ जाते हैं।

मुक्ताःस्यूरघव्यूहाच्च महापातकिनो द्विजाः।
त्रिसाहस्त्रं जपेन्मासं प्राणानायम्य वाग्मतः॥

शुद्ध होकर प्राणायाम करके ३००० मंत्र एक मास तक जपने से महान पातक से भी छूट जाता है।

अगम्यगमनेस्तेये हननेऽभक्ष्य भक्षणे।
दश साहस्त्रंमभ्यस्ता गायत्री शोधयेत् द्विजम्॥

अगम्य स्थान में गमन करना, चोरी, मारना, अभक्ष वस्तु का भक्षण कर लेना, इन दोषों के मिटाने निमित्त दस हजार गायत्री का जप करना चाहिए। इससे द्विज की शुद्धि होती है।

सहस्त्रमभ्यसेन्नमासं नित्यं जापी वने वसन्।
उपवाससमो जापस्त्रिसहस्त्रं तदित्यृचः॥

वन में बसकर हजार जप करता हुआ एक मास तक ठहरे इससे सभी किल्विष दूर होते हैं। तीन हजार जप करने से एक उपवास के समान पुण्य मिलता है।

चतुर्विंशति साहस्त्रमभ्यस्ता कृच्छ्रसंज्ञिता।
चतुष्षष्टिः सहस्त्राणि चान्द्रायणसमानितु॥

चौबीस सहस्त्र का जप करने से एक कृच्छ के समान और चौंसठ सहस्त्र का फल एक चांद्रायण व्रत के समान होता है।

आचारः प्रथमो धर्मो धर्मस्य प्रभुरीश्वरी।
इत्युक्तं सर्वशास्त्रेषु सदाचार-फलं महत्॥

आचार को प्रथम धर्म कहा है तथा धर्म की स्वामिनी देवी को कहा है। यही संपूर्ण शास्त्रों में बतलाया गया है कि सदाचार के समान कोई भी वस्तु महान फलदायिनी नहीं है।

आचारवान्सदापूतः सदैवाचारवान्सुखी।
आचारवान्सदा धन्यः सत्यं सत्यं च नारद॥

सदाचारी पुरुष सदा पवित्र और सदा सुखी होता है। नारद! इसमें असत्य नहीं कि सदाचार युक्त पुरुष धन्य होता है।

देवीप्रसाद जनकं सदाचार विधानकम्।
श्रावयेत् श्रृणुयान्मर्त्यो महासम्पतिसौख्यभाक्॥

जो देवी के प्रसाद सदाचार विधि को सुनता और सुनाता है वह सब प्रकार से धनी होता है।

जप्यं त्रिवर्ग संयुक्तं गृहस्थेन विशेषतः।
मुनिनां ज्ञानसिद्धयर्थं यतीनां मोक्षसिद्धये॥

विशेषतः जप करने वाले गृहस्थों को त्रिवर्ग की प्राप्ति होती है। मुनियों को ज्ञान सिद्धि तथा यतियों को मोक्ष की सिद्धि होती है।

सव्याहृतिका सप्रणवां गायत्रीं शिरसा सह।
ये जपन्ति सदा तेषां न भयं विद्यते क्वचित्॥

जो मनुष्य प्रणव, व्याहृति तथा शिर सहित गायत्री मंत्र का जाप करते हैं, उनको कहीं पर भी भय नहीं होता।

अभीष्ट लोकमवाप्नोति प्राप्नुयात्कामभीप्सितम्।
गायत्री वेद जननी गायत्री पापनाशिनी॥

गायत्री वेदों की माता एवं पाप नाश करने वाली है। अतः गायत्री की उपासना करने वाला मनुष्य इच्छित लोकों को प्राप्त करता है।

सावित्री जाप्य निरतः स्वर्गमाप्नोति मानवः।
गायत्री जाप्य निरतो मोक्षोपायं च विन्दति॥

गायत्री जपने वाला पुरुष स्वर्ग को प्राप्त करता है और मोक्ष को भी प्राप्त करता है।

तस्मात्सर्वप्रयत्नेन स्नातः प्रयतमानसः।
गायत्रीं तु जपेद्भक्त्या सर्वपापप्रणाशिनी॥

इस कारण से समस्त प्रयत्नों के द्वारा स्नान कर स्थिर चित्त हो सर्व पाप नाश करने वाली गायत्री का जप करे।

सर्वकामप्रदा चैव सावित्री कथिता तत्।
अभिचारेषु तां देवीं विपरीतां विचन्तयेत्॥

यह सर्व कामों की मनोभिलाषाओं की प्रदायिनी सावित्री कही गई है। इसके अभिचार में विपरीत चिंतन करना चाहिए।

कार्या व्याहृतयश्चात्र विपरीताक्षरास्तथा।
विपरीताक्षरं कार्यं शिरश्च ऋषिसत्तम॥

यहाँ विपरीताक्षर व्याहृतियों का उच्चारण करना चाहिए। हे ऋषि श्रेष्ठ! इसके शिर अक्षर को भी विपरीत करना चाहिए।

आदौ शिरः प्रयोक्तव्यं प्रणवोऽन्ते वै ऋषे।
भीतिस्थेनेव फट्कारं मध्य नाम प्रकीर्तितम्॥

प्रारंभ में शिर का प्रयोग करना चाहिए तथा प्रणव को अंत में उच्चारण करना चाहिए और फट्कार को मध्य में प्रयुक्त करे।

गायत्री चिन्तयेत्तत्र दीप्तानलसमप्रभाम्।
घातयन्तीं त्रिशूलेन केशेष्वाक्षिप्य वैरिणम्॥

प्रज्वलित अग्नि की आभा के समान आभा वाली गायत्री देवी का चिंतन करे और ऐसा ध्यान करे कि वह शत्रुओं के केशों को पकड़कर अपने त्रिशूल द्वारा उनका घात कर रही है।

एवं विधा च गायत्री जप्तव्या राजसत्तम।
होतव्या च यथा शक्त्या सर्वकामसमृद्धिदा॥

सकल कामनाओं की देने वाली गायत्री को इस प्रकार जपना चाहिए और शक्ति के अनुसार होम करना चाहिए।

निर्दहन्ती त्रिशूलेन भ्रकुटी भूषिताननाम्।
उच्चाटने तु तां देवीं वायुभूतां विचिन्तयेत्॥

अपने शूल से दहन करती हुई तथा चढ़ी हुई भृकुटी से सुशोभित मुखमंडल वाली उस वायुभूत देवी को उच्चाटन काल में चिंतन करे।

धावमानं तथा साध्यं तस्माद्देशात्तु दूरतः।
अभिचारेषु होतव्या राजिका विषमिश्रिताः॥

धावमान तथा साध्य को उस देश से दूर से ही अभिचार में विष मिश्रित होम करना चाहिए।

स्वरक्त मिश्रं होतव्यं, कटुतैलमथापि वा।
तत्राऽपि च विषं देयं होम काले प्रयत्नतः॥

अपने रक्त को कड़वे तेल में मिलाकर तथा उसमें विष मिलाकर यत्नपूर्वक होमकाल में देना चाहिए।

महापराधं बलिनं देव-ब्राह्मण-कण्टकम्।
अभिचारेण यो हन्यान्न स दोषेण लिप्यते॥

महान अपराध करने वाले बलवान को तथा देव और ब्राह्मण को कष्ट देने वाले को जो हनन करे, उसे दोष नहीं लगता।

बहूनां कण्टकात्मानं पापात्मानं सुदुर्म्मतिम्।
हन्यात्कृतापराधत्तन्तु तस्य पुण्य-फलं महत्॥

जो पापात्मा तथा दुर्मति अनेकों के मार्ग में कण्टक बना हुआ है, उस अपराधी के हनन करने वाले को महान पुण्य फल की प्राप्ति होती है।

गायत्री तंत्र के अंतर्गत कुछ थोड़े से प्रयोगों का संकेत ऊपर किया गया है। इन प्रयोगों के जो सुविस्तृत विधि-विधान, कर्मकांड एवं नियम-बंधन हैं, उनका उल्लेख यहाँ न करना ही उचित है, क्योंकि तंत्र के गुह्य विषय को सर्वसाधारण के सम्मुख प्रकट करने से सार्वजनिक सुव्यवस्था में बाधा उपस्थित होने की आशंका रहती है।

गायत्री अभिचार

मनुष्य एक अच्छाखासा बिजलीघर है। उसमें उतनी उष्णता एवं विद्युत शक्ति होती है कि यदि उस सबका ठीक प्रकार से उपयोग हो सके, तो एक द्रुतवेग से चलने वाली तूफान मेल रेलगाड़ी दौड़ सकती है। जो शब्द मुख में से निकलते हैं, वे अपने साथ एक विद्युत प्रवाह ले जाते हैं। फलस्वरूप उनके द्वारा सूक्ष्म जगत में कंपन उत्पन्न होते हैं और उन कंपनों के द्वारा अन्य वस्तुओं पर प्रभाव पड़ता है। देखा गया है कि कोई वक्ता अपनी वक्तृता के साथ-साथ ऐसी भाव विद्युत का सम्मिश्रण करते हैं कि सुनने वालों का हृदय हर्ष, विषाद, क्रोध, त्याग आदि से भर जाता है। वह अपने श्रोताओं को उँगलियों पर नचाता है। देखा गया है कि कई उग्र वक्ता भीड़ को उत्तेजित करके उससे भयंकर कार्य पूरा करा डालते हैं। कभी किसी-किसी महत्त्वपूर्ण व्यक्ति के भाषण इतने प्रभावपूर्ण होते हैं कि उससे समस्त संसार में हलचल मच जाती है।

आकाश के ऊँचे स्तर पर बरफ का चूर्ण हवाई जहाजों से फैलाकर वैज्ञानिकों ने तुरंत वर्षा कराने की विधि ढूँढ़ निकाली है। इसी कार्य को प्राचीनकाल में शब्द विज्ञान के द्वारा, मंत्र बल से किया जाता था। उस समय भी उच्चकोटि के वैज्ञानिक मौजूद थे, पर उनका आधार वर्तमान आधार से भिन्न था। उनके लिए उन्हें मशीनों की जरूरत न पड़ती थी, इतनी खरचीली खट-पट के बिना भी उनका काम चल जाता था। आज स्थूल से सूक्ष्म को प्रभावित कर तब वह शक्ति उत्पन्न

की जाती है, जिससे आविष्कारों का प्रकटीकरण होता है। आज कोयला, तेल और पानी से शक्ति पैदा की जाती है। परमाणु का विस्फोट करके शक्ति उत्पन्न करने का अब नया प्रयोग सफल हुआ है। अमेरिकन साइंस एकेडेमी के प्रधान डॉक्टर एविड का कहना है कि आगामी तीन सौ वर्षों के भीतर विज्ञान इतनी उन्नति कर लेगा कि बाहरी किसी वस्तु की सहायता के बिना मानव शरीर के अंतर्गत रहने वाले तत्त्वों के आधार के द्वारा सूक्ष्म जगत में हलचल पैदा की जा सकेगी और जो लाभ आजकल मशीनों के द्वारा मिलते हैं, वे शब्द आदि के प्रयोग के द्वारा ही प्राप्त किए जा सकेंगे।

डॉक्टर एविड भविष्य में जिस वैज्ञानिक उन्नति की आशा करते हैं, भारतीय वैज्ञानिक किसी समय उसमें पारंगत हो चुके थे। शाप और वरदान देना इसी शब्द विज्ञान की चरम उन्नति थी। शब्द का आघात मारकर प्रकृति के अंतराल में भरे हुए परमाणुओं को इस प्रकार आकर्षित-विकर्षित किया जाता था कि मनुष्य के सामने वैसे ही भले-बुरे परिणाम आ उपस्थित होते थे। जैसे आज विशेष प्रक्रियाओं के द्वारा, मशीनों की विशेष गतिविधि के द्वारा विशेष कार्य किए जाते हैं। पर प्राचीनकाल में अपने-आप को एक महाशक्तिशाली यंत्र मानकर उसी के द्वारा ऐसी शक्ति उत्पन्न करते थे, जिसके द्वारा अभीष्ट फलों को चमत्कारिक रीति से प्राप्त किया जा सकता था। वह प्रणाली साधना, योगाभ्यास, तपश्चर्या, यंत्र आदि नामों से पुकारी जाती है। इन प्रणालियों के भोग, जप, होम, पुरश्चरण, अनुष्ठान, तप, व्रत, यज्ञ, पूजन, पाठ आदि होते थे। विविध प्रयोजनों के लिए विविध कर्मकांड थे। हवन में होमी जाने वाली सामग्रियाँ, मंत्रों की ध्वनि, ध्यान का मानसिक आकर्षण, स्तोत्र और प्रार्थनाओं के द्वारा आकांक्षा प्रदीप्ति, विशेष प्रकार के आहार-विहार के द्वारा मन:शक्तियों का विशेष प्रकार

का निर्माण, तपश्चर्याओं के द्वारा शरीर में विशेष प्रकार की उष्णता का उत्पन्न होना, देवपूजा के द्वारा प्रकृति की सूक्ष्म शक्तियों को खींचकर अपने में धारण करना आदि प्रकारों से साधक अपने आप को एक ऐसा विद्युत पुंज बना लेता था कि उसका प्रवाह जिस दिशा में चल पड़े, उस दिशा के प्रकृति के परमाणुओं पर उसका आधिपत्य हो जाता था और उस प्रक्रिया के द्वारा अभीष्ट परिणाम प्राप्त होते थे।

बिना मशीन के चलने वाले जिन अद्‌भुत दिव्य अस्त्रों का भारतीय इतिहास में वर्णन है, उनमें आग्नेयास्त्र भी एक था। इससे आग लगाई जाती थी, जलन, आँधी या तूफान पैदा किया जाता था। व्यक्तिगत प्रयोगों में इससे किसी व्यक्ति विशेष पर प्रयोग करके उसकी जान तक ले ली जाती थी। अग्निकांड कराए जाते थे। इसे तांत्रिक काल में 'अगीया बैताल' कहा जाता था। इसका प्रयोग गायत्री मंत्र के द्वारा भी होता था, जिसका कुछ संकेत नीचे के प्रमाणों में वर्णित है। उलटी गायत्री को अनुलोम जप कहते हैं। यही आग्नेयास्त्र है।

'त् या द चो प्र नः यो यो धि। हि म धी स्य व दे र्गो भ ण्यं रे र्व। तु वि त्स त स्वः वः र्भु भूः ॐ। यह मंत्र आग्नेयास्त्र है। इस विद्या का कुछ परिचय नीचे देखिए—

आग्नेयास्त्रस्य जानाति विसर्गादानपद्धतिम्।
यः पुमान गुरुणा शिष्टस्तस्याधीनं जगत्त्रयम्॥

जो पुरुष इस आग्नेयास्त्र के छोड़ने तथा खींचने की विधि को जानता है और जो गुरु के द्वारा शिक्षित है उसके अधिकार में त्रैलोक्य है।

आग्नेयास्त्राधिकारी स्यात्सविधानमुदीर्यते।
आग्नेयास्त्रमिति प्रोक्तं विलोमं पठितं मनु॥

और वह आग्नेयास्त्र का अधिकारी हो जाता है। अब आग्नेयास्त्र की प्रयोग विधि कहते हैं। आग्नेयास्त्र प्रतिलोम और अनुलोम दो प्रकार से कहा गया है।

अर्चनं पूर्ववत्कुर्त्याच्छक्तीनां प्रतिलोमतः।
सर्वत्र दैशिकः कुर्यात् गायत्र्या द्विगुणं जपम्॥

प्रतिलोमता से शक्तियों का पूजन करे और सर्वत्र गायत्री का दूना जप करे।

क्रूरकर्माणि कुर्वीत प्रतिलोमविधानतः।
शान्तिकं पौष्टिकं कर्म, कर्तव्यमनुलोमतः॥

प्रतिलोम के विधान से जपादि क्रूर कर्मों की सिद्धि के लिए करे और शांतिमय एवं पुष्टिदायक कर्मों की सिद्धि के लिए अनुलोम के विधान से करे।

उपरोक्त विधि एक संकेत मात्र है। उसके साथ में एक विस्तृत कर्मकांड एवं गुप्त साधनाविधि है। उस सबका रहस्य गुप्त ही रखा जाता है क्योंकि उन बातों का सावर्जनिक प्रकटीकरण करना सब प्रकार से निषिद्ध है।

मारण प्रयोग

तंत्र ग्रंथों में मारण, मोहन, उच्चाटन आदि के कितने ही प्रयोग मिलते हैं। शत्रु-नाश के लिए मारण प्रयोगों को काम में लाया जाता है। मारण कितने ही प्रकार का होता है। एक तो ऐसा है जिससे किसी मनुष्य की तुरंत मृत्यु हो जाए। ऐसे प्रयोगों में 'घात' या 'कृत्या' प्रसिद्ध है। वह एक शक्तिशाली तांत्रिक अग्नि अस्त्र है जो प्रत्यक्षतः दिखाई नहीं पड़ता तो भी बंदूक की गोली की तरह निशाने पर पहुँचता है और शत्रु को गिरा देता है। दूसरे प्रकार के मारण मंद मारण कहे जाते हैं। इनके प्रयोग से किसी व्यक्ति को रोगी बनाया जा सकता है। ज्वर, दस्त, दरद,

लकवा, उन्माद, मतिभ्रम आदि रोगों का आक्रमण किसी व्यक्ति पर उसी प्रकार हो सकता है, जिस प्रकार कीटाणु बमों से प्लेग, हैजा आदि महामारियों को फैलाया जाता है।

इस प्रकार के प्रयोग नैतिक दृष्टि से उचित हैं या अनुचित? यह प्रश्न दूसरा है, पर इतना निश्चित है कि यह असंभव नहीं संभव है। जिस प्रकार विष खिलाकर या शस्त्र चलाकर किसी मनुष्य को मार डाला जा सकता है वैसे ही ऐसे अदृश्य उपकरण भी हो सकते हैं; जिनको प्रेरित करने से प्रकृति के घातक परमाणु एकत्रित होकर अभीष्ट लक्ष्य की ओर दौड़ पड़ते हैं और उस पर भयंकर आक्रमण करके उस पर चढ़ बैठते हैं तथा परास्त करके प्राण संकट में डाल देते हैं। इसी प्रकार प्रकृति के गर्भ में विचरण करते हुए किसी रोग विशेष के कीटाणुओं को किसी व्यक्ति विशेष की ओर विशेष रूप से प्रेरित किया जा सकता है।

'मृत्यु किरण' आज का ऐसा ही वैज्ञानिक आविष्कार है। किसी प्राणी पर इन किरणों को डाला जाए तो उसकी मृत्यु हो जाती है। प्रत्यक्ष देखने में उस व्यक्ति को किसी प्रकार का घाव आदि नहीं होता पर अदृश्य मार्ग से उसके भीतरी अवयवों पर ऐसा सूक्ष्म आघात होता है कि उस प्रहार से उसका प्राणांत हो जाता है। यदि वह आघात हलके दरजे का हुआ तो उससे मृत्यु तो नहीं होती, पर मृत्युतुल्य कष्ट देने वाले या घुला-घुलाकर मार डालने वाले रोग पैदा हो जाते हैं।

शाप देने की विद्या प्राचीनकाल में अनेक लोगों को मालूम थी। जिसे शाप दिया था उसका बड़ा अनिष्ट होता था। शाप देने वाला अपनी आत्मिक शक्तियों को एकत्रित करके एक विशेष विधि-व्यवस्था के साथ जिसके ऊपर उनका प्रहार करता था, उसका वैसा ही अनिष्ट हो जाता था जैसा कि शाप देने वाला चाहता था। तांत्रिक अभिचारों के द्वारा भी इसी प्रकार से दूसरों का अनिष्ट हो सकता है। परंतु ध्यान रखने की

बात यह है कि इस प्रकार के प्रयोगों में प्रयोगकर्ता की शक्ति भी कम नष्ट नहीं होती। बालक प्रसव करने के उपरांत माता बिलकुल निर्बल, निःसत्व हो जाती है। किसी को काटने के बाद साँप निस्तेज, हतवीर्य और शक्तिरहित हो जाता है। मारण, उच्चाटन के अभिचार करने वाले लोगों की शक्तियाँ भी भारी परिमाण में व्यय हो जाती हैं और उसकी क्षति-पूर्ति के लिए उन्हें असाधारण प्रयोग करने होते हैं।

जिस प्रकार तंत्र द्वारा दूसरों का मारण, मोहन, उच्चाटन आदि अनिष्ट हो सकता है, उसी प्रकार कोई कुशल तांत्रिक इस प्रकार के अभिचारों को रोक भी सकता है। उन प्रयोगों को निष्फल भी कर सकता है। यहाँ तक कि उस आक्रमण को इस प्रकार उलट सकता है कि वह प्रयोगकर्त्ता पर उलटा पड़े और उसी का अनिष्ट कर दे। घात, कृत्या, चौकी आदि को कोई भिन्न तांत्रिक उलट दे तो उसके प्रेरक प्रयोक्ता पर विपत्ति का पहाड़ टूटा हुआ ही समझिए।

उपरोक्त अनिष्टकर प्रयोग अकसर होते हैं—तंत्रविद्या द्वारा हो सकते हैं। पर नीति, धर्म, मनुष्यता और ईश्वरीय विधान की सुस्थिरता की दृष्टि से ऐसे प्रयोगों का किया जाना नितांत अनुचित और अवांछनीय है। यदि इस प्रकार की गुप्त हत्याओं का तांता चल पड़े तो उससे लोक-व्यवस्था में भारी गड़बड़ी उपस्थित हो जाए और परस्पर के सद्भाव एवं विश्वास का नाश हो जाए। हर व्यक्ति दूसरों को आशंका, संदेह एवं अविश्वास की दृष्टि से देखने लगे। इसलिए तंत्रविद्या के भारतीय तांत्रिकों ने इन क्रियाओं को निषिद्ध घोषित करके उन विधियों को गोपनीय रखा है। आजकल परमाणु बम बनाने के रहस्यों को बड़ी सावधानी से गुप्त रखा जा रहा है, ताकि उनकी जानकारी सर्वसुलभ हो जाने से कहीं उसका दुरुपयोग न होने लगे। उसी प्रकार इन अभिचारों को भी सर्वथा गोपनीय रखने का ही नियम बनाया गया है। ❐❐

मुद्रक—युग निर्माण योजना प्रेस, मथुरा (उ० प्र०)